छत्तीसगढ़ शासन

वन एवं संस्कृति विभाग
मंत्रालय, रायपुर

क्रमांक एफ 7 .42 ६ 2001ध्व. सं. रायपुर, दिनांक 22 अक्टूबर, 2001

संकल्प

विषय :– छत्तीसगढ़ राज्य वन नीति – 2001

1–भूमिका

1.1 भारत शासन के संकल्प क्रमांक 3–1 / 1986 / एफ पी. दिनांक 7 दिसम्बर 1988 व्दारा तैयार की गई राष्ट्रीय वन नीति राष्ट्रीय परिपेक्ष्य में वन प्रबंधन की समस्याओं और उनके समाधान हेतु आवश्यक कार्यवाही पर प्रकाश डालती है।

1.2 छत्तीसगढ़ राज्य जिसका विस्तार 17 ^{0} 46श से 24 ^{0} 6श उत्तर अक्षांश तथा 80 ^{0} 15श से 84 ^{0} 51श पूर्वी देशांतर के मध्य हैं, के कुल भौगोलिक क्षेत्रा 1,35,224 वर्ग कि.मी. का लगभग 44 : क्षेत्रा वनों से आच्छादित हैं और इसमे 4 प्रमुख नदी प्रणालियों जैसै महानदी, गोदावरी, नर्मदा, और गंगा का जलग्रहण क्षेत्रा शामिल हैं । महानदी,इंद्रावती, हसदेव, शिवनाथ, अरपा, ईब राज्य की प्रमुख नदियॉ हैं । राज्य की जलवायु मुख्यतः सह आद्र तथा_ औसत वार्षिक वर्षा 1200 से 1500 मि.मी. है ।

1.3 राज्य में विगत वर्षो में वनों की गुणवत्ता में गंभीर ह्रास परिलक्षित हुआ है। यह स्थिति मुख्यतः वनों के ऊपर अत्यधिक जैविक दबाब तथा जलाऊ लकड़ी, चारा, एंव काष्ठ की निरंतर बढ़ती मांग, अप्रभावी वन सुरक्षा तंत्रा, आवश्यक क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण एवं पर्यावरणीय सुरक्षा उपायों को सुनिश्चित किये बिना वन भूमि का गैर वानिकी उपयोगों के लिये प्रत्यावर्तन तथा वनों को राजस्व प्राप्ति का साधन मानने की प्रवृति के कारण उत्पन्न हुई है।

1.4 राज्य के वनो को दो प्रमुख वर्गो में विभाजित किया गया है, यथा, उष्णकटिबंधीय आद्र पर्णपातीय वन एवं उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपातीय वन । राज्य की दो प्रमुख वृक्ष प्रजातियॉ साल (शोरिया रोबस्टा) तथा सागौन (टेक्टोना ग्रान्डिस) हैं । इसके अतिरिक्त अपर छत्रा में बीजा (डिप्ट्रोकार्पस मार्सूपियम) साजा (टर्मिनेलिया टोमेन्टोसा) धावड़ा, (ऐनागाईसिस लैटिफोलिया), महुआ(मधुका इंडिका), तेन्दू (डाईयोस्पाईरस मिलैनौजाईलान) प्रजातियॉ है। मध्य छत्रा में आंवला, (इम्बिलिका ऑफिसिनेलिश) कर्रा (कोलीस्टेन्थस कोलिनस) तथा बांस (डेन्ड्रोकैलामस स्ट्रेक्टिस) आदि महत्वपूर्ण प्रजातियॉ हैं।

1.5 जैव भौगोलिक दृष्टिकोण से छत्तीसगढ़ राज्य डेकन जैव क्षेत्रा में शामिल हैं तथा इसमें मध्य भारत के प्रतिनिधि वन्यप्राणीयों जैसे शेर, (पैन्थरा टिगरीस), तेन्दुआ (पैन्थरा पार्ड्स) गौर (बॉस गौरस) सांभर, (सेरवस यूनिकोलर) चीतल, (एक्सेस एक्सेस) , नीलगाय (बोसेलाफस ट्रेगोकेमेलस) एवं जंगली सुअर (सस सेक्रोफा) पाये जाते है। दुर्लभ वन्य प्राणियों जैसे वन भैसा (बूबालस बूबालिस) तथा पहाड़ी मैना (ग्रैकुला रिलिजिओसा) इस राज्य की गौरवशाली धरोहर हैं जिन्हें क्रमशः राज्य पशु एवं राज्य पक्षी घोषित किया गया है ।

1.6 यह राज्य, कोयला, लोहा, बॉक्साईट, चूना, कोरंडम, हीरा, स्वर्ण, टीन इत्यादि खनिज संसाधनों से परिपूर्ण है , जो मुख्यतः वन क्षेत्राों में ही पाये जाते हैं ।

1.7 राज्य की जनसंख्या आदिवासी बाहुल्य हैं जो आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से वनों पर निर्भर है । इसके अतिरिक्त बड़ी संख्या में गैर आदिवासी, भूमिहीन एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े समुदाय भी वनों पर निर्भर हैं ।

2 मूल उद्देश्य

2.1 राज्य वन नीति को संचालित करने वाले मूल उद्देश्य निम्नानुसार हैं :–

- राज्य के विपुल संसाधन को निरंतरता के आधार पर स्थानीय निवासियों के दीर्घ कल्याण हेतु चिन्हांकित कर उनके उन्मुक्त उपभोग को सामुदायिक नियंत्राण एवं प्राथमिकता के आधार पर संरक्षित एवं प्रबंधित संसाधन के रूप में मान्य करना ।
- प्रमुख वनोपज (लकड़ी) से लघुवनोपज ,एकल स्तर से बहुस्तरीय वन प्रबंधन तथा प्रतीकात्मक प्रजाति से वन्य प्राणियों के समस्त छोटे बड़े घटकों को समानुपातिक महत्व दिया जाना ।
- राज्य के वनों को संरक्षित एवं संवर्धित कर पर्यावरणीय स्थायित्व तथा पारिस्थितिकीय संतुलन स्थापित करना ।
- जैविक रूप से सम्पन्न प्राकृतिक वन , जो आदिवासी जन जीवन के प्रमुख सांस्कृतिक आधार हैं, को सुरक्षित रखकर राज्य के जैव सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखना ।
- नदियों एवं जलाशयों के जल ग्रहण क्षेत्राों में होने वाले भूक्षरण एंव वन आवरण कमी को नियंत्रित करना ताकि बाढ़ एवं सूखे की स्थिति उत्पन्न न हो । निरंतर गिर रहे भू–जल स्तर को उच्चतम उपयोग स्तर पर लाना और जलाशयों मे गाद जमा होने की गति मे कमी लाना ।
- कम वन क्षेत्रा वाले जिलों में वृक्ष रहित अनुत्पादक भूमि पर कृषि वानिकी एवं वृक्ष खेती जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से वन आवरण में वृद्धि करना ।
- वनों की धारक क्षमता को ध्यान में रखकर ग्रामीण एवं आदिवासी जनता की जलाऊ एवं छोटी लकड़ी, चारा एवं लघु वनोपज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना ।
- वनों को आर्थिक , लाभ का स्त्रोात न मानकर, राज्य के पर्यावरणीय स्थायित्व एवं पारिस्थितिकीय संतुलन को सर्वोच्च प्राथमिकता देना ।
- उपरोक्त उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आवश्यक युक्ति युक्त नीति एवं वैधानिक संरचना सृजित करना ।

3. वन प्रबंधन की अनिवार्यताऐं :–

3.1 विद्यमान वन एवं वन भूमि को पूर्ण संरक्षण प्रदान कर उनकी उत्पादकता में सुधार किया जाना चाहये। परिष्कृत वैज्ञानिक पद्धतियों से काष्ठ विदोहन एवं वन उपयोग को प्रोत्साहित कर उच्चतम आर्थिक लाभ प्राप्त किया जाना चाहिये ।

3.2 राज्य की सम्पूर्ण जैव संस्कृति विविधता को संरक्षित रखने के लिये राष्ट्रीय उद्यानों, वन्य प्राणी अभ्यारण्यों , जैव संरक्षित क्षेत्राों एवं अन्य संरक्षित क्षेत्राों का सुदृढ़ीकरण कर उनमें समुचित विस्तार किया जाना चाहिये ।

3.3 वनों से प्राप्त होने वाली विविध प्रकार के उत्पादों तथा सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए, भौतिक, द्रव्यिक, मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय परिसम्पत्तियों और उनके समुचित अधिकारिता सम्पन्न परिवेश को केन्द्र बिन्दु मानते हुए , **लोक संरक्षित क्षेत्रा** एक ऐसा क्रियाशील व जनोन्मुखी संरचना की अवधारणा है जिसमें जैव विविधता को अक्षुण्ण रख, उसके सतत उपयोग से स्थानीय समुदायों की बुनियादी आवश्यकताओं की परिकल्पना की गई है । अतः वनवासियों की अजीविका सुरक्षा के सृदढ़ीकरण हेतु, लोक संरक्षित क्षेत्राों का जाल बिछाया जाना चाहिये जिसमे गरीबी उन्मूलन हेतु परिसम्पत्तियों का बैंक बन सके ।

3.4 वनों के समीप रहने वाले लोगों हेतु पर्याप्त चारा, जलाऊ तथा छोटी इमारती लकड़ी का प्रावधान आवश्यक है ताकि वनों की सतत् धारक क्षमता में होने वाले भावी ह्मस को रोका जा सके । चूँकि ग्रामीण क्षेत्राों में जलाऊ लकड़ी, ऊर्जा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन है इसलिये जलाऊ लकडी के उत्पादन बढ़ाने के लिये वनीकरण कार्यक्रम को प्रभावकारी रूप से क्रियान्वित किया जाना चाहिये। इसकी बढ़ती मांग के कारण वनों पर होने वाले दबाव को कम करने के लिये जलाऊ लकड़ी के स्थान पर ऊर्जा के अन्य वैकल्पिक स्त्रोातों को प्रोत्साहित किया जाए।

3.5 अन्य लघु वनोपज तथा औषधीय पौधे आदिवासियों एवं वनों पर आश्रित अन्य समुदायों के जीवन यापन के महत्वपूर्ण साधन हैं । ऐसे उत्पादों को पूर्ण संरक्षण दिया जाना चाहिये तथा उन्हें परिष्कृत रूप से विनाशविहीन विदोहन व्दारा रोजगारमूलक एवं आय संवर्धन का साधन बनाया जाना चाहिये ।

लधु वनोपज वनवासियों की आजीविका के प्रमुख स्त्रोत हैं। यथा संभव कच्चे माल के रुप में लधुवनोपज को प्रदेश के बाहर न भेजते हुए, स्थानीय स्तर पर ही इनका प्रसंस्करण एवं मूल्यसंवर्धन प्रोत्साहित किया जाए।

3.6 प्राकृतिक वनों पर दबाब कम करने के लिये शहरी क्षेत्रों में वनेत्तर क्षेत्रों से उत्पादित काष्ठ एवं बल्ली प्रदाय किया जाना आवश्यक है। इसलिये राज्य शासन को कृषि वानिकी, वृक्ष खेती को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये ।

3.7 समस्त जैव सांस्कृतिक धरोहरों की सुरक्षा तथा बौद्धिक सम्पदा अधिकारों में अवांछित हस्तक्षेप एवं राज्य तथा राज्य के बाहर जैविक चोरी के खतरे से रोकथाम हेतु समुचित नीतियों तथा वैधानिक उपायों का निर्धारण किया जाना चाहिये।

3.8 राज्यके समस्त वन क्षेत्रों का विधिवत रूप से स्वीकृत कार्य आयोजना के अनुरूप प्रबंधन किया जाना चाहिये ।

4.– रणनीति

राज्य के वन प्रबंधन के उददेश्यों एवं अनिवार्यताओं को निम्नानुसार एक सुपरिभाषित रणनीति द्वारा प्राप्त किया जा सकता है :

4.1 वन भूमि

राष्ट्रीय वन नीति का प्रमुख उद्देश्य राष्ट्र के एक तिहाई भाग को वनाच्छादित करना है। यद्यपि छत्तीसगढ़ राज्य इस दृष्टिकोण से विशिष्ट है कि इसका एक तिहाई से अधिक भौगोलिक क्षेत्रा वनाच्छादित है, परन्तु यहॉ ऐसे भी कुछ जिले हैं जहॉ वनक्षेत्रा निर्धारित मानदण्ड से कम है और जहॉ विद्यमान वन आवरण को संरक्षित रखते हुये उनके विस्तार की आवश्यकता है।

राज्य से उद्गमित एवं प्रवाहित होने वाली नदियों के जलग्रहण क्षेत्रों में पहाड़ो एवं दृष्यावलियों पर वृक्ष आवरण की सुरक्षा अतिआवश्यक है।

4.2 राज्य के वनों का प्रबंधन :–

4.2.1 किसी भी वन क्षेत्रा को बिना पूर्व स्वीकृत कार्य आयोजना/प्रबंध योजना जो राष्टीय/राज्य वन नीति के आधारभूत सिद्वातों एवं वानिकी प्रबंध के सतत विकासशील सिद्वांतों पर आधारित हो, कार्य करने हेतु स्वीकृत न दी जाय। वनों पर वन प्रबंधन के प्रभाव का समय–समय पर निर्धारित मापदण्ड एवं सूचकांकों द्वारा अनुश्रवित किया जाय। राज्य को कार्य आयोजना / प्रबंध आयोजना के प्रावधानों के सुनिश्चित क्रियान्वयन हेतु एक अनुश्रवण प्रणाली में विभाग के लिए आवश्यक मार्गदर्शी निर्देश प्रसारित करना चाहिये।

4.2.2 कम वन आवरण वाले जिलों में वैज्ञानिक एवं तकनीकी उपायों द्वारा विद्यमान वनों की उत्पादता बढ़ाने तथा वन आवरण में समुचित विस्तार की आवश्यकता है ताकि स्थानीय निवासियों की वनोपज संबधी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित हो सके।

4.2.3 राज्य में किसी भी बाहरी प्रजाति को शासकीय अथवा अशासकीय माध्यम से अपनाया न जाय, जब तक पारिस्थितिकीय, वन, समाज शास्त्रा एवं कृषि विशेषज्ञों के दीर्घगामी वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सुस्पष्ट न हो जाये कि उक्त प्रजाति राज्य के लिये उपयोगी है तथा इसका यहॉ के स्थानीय वनस्पति, पारिस्थितिकीय एवं जैव सॉस्कृतिक परिवेश पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पडेगा।

4.2.4 राज्य के वन प्रंबधन का आधार संयुक्त वन प्रबंध होना चाहिये। सभी संयुक्त वन प्रबंधन समितियों जैसे ग्राम वन समिति, वन सुरक्षा समिति एवं इको विकास समिति में भूमिहीन, सीमान्त कृषक एवं महिलाओं की समुचित भागीदारी, निर्णय लेने के सभी स्तरों पर सुनिश्चित करने हेतु विशिष्ट प्रावधान किया जाय।

वनांचल एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों के अधिकाधिक क्षमताओं का उपयोग सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम में सुनियोजित रुप से किया जाना चाहिए। राज्य में सहभागी वन प्रबंध कार्यक्रम को सुदृढ़ करने हेतु वनवासियों के वन आधारित आर्थिक कार्यक्रमों में विस्तार किया जाना चाहिए और उन्हें आर्थिक सहयोग देने वाली संस्थाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

4.2.5 राज्य में सतत स्थायी वानिकी विकास, जीविकोपार्जन संरक्षा तथा जैव सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण हेतु **लोक संरक्षित क्षेत्रों (पी0पी0ए0)** की स्थापना की जानी चाहिए। स्वीकार्य प्रबंधन के इस मूलभूत परिवर्तन को संरक्षण–विकास रुढ़वादिता के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत संकटसूचक संकेतों, मानवीय संवेदनाओं जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक मान्यताओं, मानदॅडों एवं पद्धतियों जो हमारी एतिहासिक, सांस्कृतिक एवं परम्पराओं के प्रतिसूचक हैं से जोड़कर देखा जाना चाहिये क्योंकि इसमें सफलता के बेहतर अवसर सन्निहित हैं।

4.3 अधिकार एवं सुविधायें

राज्य, वनांचलों तथा वन क्षेत्रों के आस पास रहने वाले लोगों को वनों मे प्रवेश तथा उसमें पाये जाने वाले उत्पादों को अपनी निजी उपयोग मे लाने के परम्परागत अधिकारों तथा सुविधाओं को मान्यता देता है। इस प्रकार के अधिकार व सुविधाएं जिन्हे निस्तार कहते हैं प्रायः विधि प्रदत्त एवं परम्परागत हैं तथा राज्य के अधिकांश लोगों के जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार हेतु आवश्यक है।

4.3.1 निस्तार जिसमें चराई एवं सूखी जलाऊ लकड़ी का एकत्रीकरण जैसे अधिकार एवं सुविधाऐं शामिल है सदैव वनों के धारक क्षमता पर आधारित होने चाहिये। इस धारक क्षमता को अधिक पूंजीनिवेश, वन संवर्धन अनुसंधान तथा क्षेत्रा के सामाजिक एवं आर्थिक विकास द्वारा अनुकूलतम स्तर पर प्रतिस्थापित किया जाना चाहिये। पालतू बांध कर खिलाने की प्रथा को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। समुदाय की ऐसी आवश्यकताऐं जिन्हें विद्यमान प्राकृतिक वनों से पूरा किया जाना संभव न हो, को वनेत्तर क्षेत्रों में सामाजिक वानिकी/कृषि वानिकी/वृक्ष खेती द्वारा पूर्ण किया जाना चाहिये।

4.3.2 वन क्षेत्रों में निवासरत व्यक्तियों जिन्हें परम्परागत अधिकार एवं सुविधायें प्रदत्त है, को इस प्रकार प्रेरित किया जाना चाहिए जिससे वे उन वन क्षेत्रों, जहां से वे लाभ प्राप्त कर रहे हैं, को स्वयं संरक्षित एवं विकसित कर सकें। वन संबधित अधिकार एवं सुविधाऐं मुख्यतः प्राकृतिक वनों की सीमा से 5 किलोमीटर की परिधि में रहने वाले समुदायों के निजी उपयोगों के लिये होना चाहिये। यह आशा की जाती है कि संयुक्त वन प्रबंधन कार्यक्रम से जनता को अपने परम्परागत अधिकार एवं सुविधाओं को वनों के धारक क्षमता के अनुरुप सीमित करने की प्रेरणा प्राप्त होगी।

4.3.3 वन एवं वनों के आसपास रहने वाले आदिवासियों एवं अन्य गरीब व्यक्तियों का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन वनों के इर्द गिर्द केन्द्रित है। इन समुदायों के जलाऊ, चारा, लघुवनोपज एवं इमारती लकड़ी संबधी आवश्यकताओं की पूर्ति प्राथमिकता के आधार पर, जैव विविधता एवं संरक्षण को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

4.4 साल एवं बांस वनों का प्रबंधन

साल एवं बांस के वन राज्य के वन पारिस्थितकी के महत्वपूर्ण घटक हैं। राज्य में साल एवं मिश्रित वनों के मध्य ऐसे वृहद संक्रमिक वन क्षेत्रा भी हैं जिन्हें विशिष्ट प्रबंधन पद्धतियों की आवश्यकता है। ऐसे वन क्षेत्रा न केवल पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से संवेदनशील एवं आवश्यक हैं अपितु वनों एवं वनों के आसपास निवास करने वाले ग्रामीणों की जीविकोपार्जन संबधी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी करते हैं। अतः राज्य को इन संक्रमिक साल वनों को विशेष उपचार प्रदाय कर तथा बिगड़े बॉस वनों को पुनरुद्धार द्वारा तथा अच्छे बांस वनों के समुचित रखरखाव कर इनके प्रबंधन को प्रभावी बनाकर उत्पादकता बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किये जाने चाहिये।

4.5 लघुवनोपजों का संरक्षण

राज्य में अकाष्ठीय वनोपज या लघुवनोपज जैसे तेंदूपत्ता, सालबीज, इमली, चिरोंजी, कुल्लू एवं धावड़ा गोंद, कोसा ककून, शहद इत्यादि का संग्रहण आदिवासियों, भूमिहीनों, सीमान्त कृषकों एवं अन्य गरीब समुदायों के जीविकोपार्जन संरक्षा हेतु महत्वपूर्ण घटक है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि लधु वनोपज गरीब ग्रामवासियों के प्रमुख आधार हैं न कि कथित वृहद काष्ठीय वनोपज। लधुवनोपज जैसे तेंदुपत्ता एवं साल बीज से शासन को काफी राजस्व भी मिलता है जिसे अब संग्राहकों में ही वितरित किया जा रहा है।

4.5.1 राज्य को छत्तीसगढ़ राज्य लघु वनोपज (व्यापार एवं विकास) सहकारी संघ मर्यादित के माध्यम से राज्य के भीतर लघुवनोपजों का सतत स्थाई उपयोग एवं दीर्घगामी संरक्षण हेतु आवश्यक उपाय सुनिश्चित करना चाहिये।

4.5.2 राज्य शासन को पंचायत उपबंध (अनुसूचित क्षेत्राों का विस्तार) अधिनियम 1996 के प्रावधानों के अनुसार लघुवनोपज पर स्थानीय समुदायों को मालिकाना हक देने हेतु आवश्यक कार्य करना चाहिये।

4.6 औषधि पौधों का संरक्षण

सभ्यता के प्रांरभ से वन बहुमूल्य औषधीय पौधों के स्त्राोत रहे हैं। राज्य के समृद्व औषधीय एवं शाकीय पौधों को दृष्टिगत रखते हुये इनके अंतःस्थलीय एवं बाह्य स्थलीय संरक्षणय धरेलूकरण तथा विनाशविहीन विदोहन हेतु स्थानीय व्यक्तियों जैसे परम्परागत ओझा, गुनिया तथा वैद्यों के सक्रिय सहयोग से एक प्रक्रिया विकसित की जानी चाहिये। ग्रामीणों विशेषकर आदिवासियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं औषधीय परम्परा को इनके समुदाय आधारित संरक्षण एवं उपयोग का आधार बनाना चाहिये।

4.7 वन संरक्षण

वन एक सर्व सुलभ संसाधन होने के कारण विविध प्रकार के दबावों जैसे चोरी, अग्नि, अवैध चराई तथा अतिक्रमण हेतु अत्यन्त संवेदनशील है। वन संसाधन जैसे काष्ठ, एवं वन्य जीव एवं उनके अंगों की चोरी, दूसरे अपराधों की तुलना में कम जोखिम एवं अधिक लाभ वाले अपराध माने जाते हैं । अनियंत्रित वन अग्नि से जैव विविधता तथा वनो के पुनरूत्पादन में अत्यधिक क्षति होती है साथ ही वन अग्नि उन जैविक पदार्थो तथा सूक्ष्म जीवों को भी नष्ट कर देती है जो वनों की पारिस्थितिकीय विकास के लिये अति आवश्यक हैं। पालतू पशुओं द्वारा वनों में अनियंत्रित चराई वनों के अवमूल्यन, अपघटन तथा पुनरूत्पादन में कमी का प्रमुख कारण है। खेती के लिये वन भूमि में अतिक्रमण, वनों के समाप्ति का एक प्रमुख कारण है। अतः वनो की सुरक्षा को अत्यधिक प्रभावी व सुदृढ़ बनाने की आवश्यकता है ।

4.7.1 स्थानीय लोगों को शामिल करते हुए ग्रामीण स्तर पर समितियों का निर्माण कर सुरक्षा तंत्रा को अधिक कारगर बनाया जाना चाहिए एवं इन समितियों को अधिक सक्षम बनाने लिये उन्हें और अधिकार तथा प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

4.7.2 वन अपराध प्रकरणों एवं अपराधियों को नियंत्रित करने के लिये युक्ति युक्त वैधानिक शक्तियों एवं सांख्यकीय सूचनाओं युक्त **''वन अपराध ब्यूरो''** स्थापित किया जाना चाहिए।

4.7.3 वन अपराध प्रकरणों के त्वरित निपटारे हेतु **जिला स्तरीय विशेष न्यायालय** गठित किया जाना चाहिये।

4.7.4 वनों में चराई नियंत्राण के लिये प्रचलित चराई नियमों को वनों की धारक क्षमता के परिपेक्ष्य मे ग्रामीण समुदायों की सक्रिय भागीदारी से प्रभावकारी बनाया जाना चाहिए। वनो में पशु चराई उसकी धारक क्षमता से अधिक नहीं होना चाहिए।

4.7.5 वनों में अग्नि को कड़ाई से नियंत्रित किया जाना चाहिये। परिष्कृत एवं आधुनिक तकनीकों एवं उपकरणों जैसे भौगोलिक सूचना प्रणाली एवं सूदूर संवेदनशील तकनीकी द्वारा वन अग्नि को नियंत्रित किया जाना चाहिये।

4.8 वन भूमि का गैर वानिकी प्रयोजन हेतु हस्तांतरण

4.8.1 वन भूमि या वृक्षाच्छादित भूमि को विविध परियोजनाओं और कार्यक्रमों के लिये आसानी से उपलब्ध होने वाली संसाधन न समझकर राष्ट्रीय धरोहर समझा जाना चाहिये। जिसके समुचित सुरक्षा का दायित्व एवं सतत उत्पादों के उपभोग का अधिकार समस्त समुदायों को है। वन भूमि का गैर वानिकी कार्य हेतु हस्तांतरण, विशेषज्ञों द्वारा भूमि के पारिस्थितकीय, पर्यावरणीय एवं सामाजिक मूल्यों एवं लाभों के परिपेक्ष्य में अत्यधिक सावधानी से परीक्षण किया जाना चाहिये। जिन प्रकरणों में वन भूमि का हंस्तातरण किया जाना हो, उसके परियोजना में न केवल पहले से ही पुनरुत्पादन/ क्षतिपूर्ति वृक्षारोपण का अपितु क्षेत्रा के सामाजिक अधोसंरचना विकास का भी प्रावधान किया जाना चाहिये।

4.8.2 ऐसे हितग्राहियों को जिन्हें वनभूमि एवं वृक्षादित भूमि में खदान स्थापित करने एवं उत्खनन की अनुमति प्राप्त है उन्हें उपयोग उपरान्त उत्खनन से होने वाले पर्यावर्णीय क्षति को रोकने तथा क्षेत्रा को हरा भरा करने हेतु केन्द्र शासन के मार्गदर्शी निर्देशों एवं स्थापित वानिकी सिंद्धातों के अनुरुप समग्र प्रयास करना चाहिये। उत्खनित क्षेत्राों मे पुनरुद्धार कार्य किया जाना चाहिये ताकि यहां पारिस्थितिकीय संतुलन पुनःस्थापित हो सके।

4. 9 जैव–सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण

4.9.1 छत्तीसगढ़ राज्य जैव–सांस्कृतिक विविधता से परिपूर्ण है। इस विविधता को निम्न गतिविधियों व्दारा संरक्षित किया जाना चाहिये :–

- राज्य के विभिन्न क्षेत्राों में जैव–सांस्कृतिक संसाधनो के सर्वेक्षण एवं अभिलेखीकरण में तेजी लाना चाहिए। इस सर्वेक्षण में विशिष्ट प्रजातियों/आबादियों एवं समुदायों में वितरण तथा मानवीय–जैविकता के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण वर्गो की जानकारी शामिल किया जाना चाहिए।
- संरक्षित क्षेत्राों जिसमें बायो स्फेयर रिजर्व , राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण्य, जीन संरक्षण क्षेत्रा, और लोक संरक्षित क्षेत्राों आदि की स्थापना करते हुए जैव विविधता का संरक्षण किया जाना चाहिए। ऐसे क्षेत्राों में वे स्थल भी शामिल किये जायेगे जो वर्गीकरण एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं । साथ ही ऐसे पौधे एवं प्राणियों को भी समुचित महत्व दिया जाये जो वर्गीकरण के अन्तर्गत मेरुदंडधारी एव अमेरुदंडधारी प्राणी तथा सूक्ष्म पौधे हैं जो कि स्वस्थ पारिस्थितिकीय तंत्रा का संतुलन बनाये रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं । राष्ट्रीय उद्यानो / बायोस्फेयर/जीन संरक्षण केन्द्रो को स्थापित करने में यदि आदिवासियों को विस्थापित किया जाता है तो उन्हें उचित स्थल ऐसी जगह पर बसाया जावे जिससे बसाहट उपरांत उनके जीवन स्तर में गुणात्मक सुधार परिलक्षित हो।
- राज्य की जैव–सांस्कृतिक विविधता के संरक्षण के लिये विधिक तथा प्रशासकीय प्रावधानों का भी समावेश किया जावे ताकि जैव चोरी पर प्रभावी नियंत्राण के लिये पौधों तथा वन्य प्राणी अनुवांशिक साधनों का सतत व समुचित उपयोग राज्य व राष्ट्र हित में किया जा सके । राज्य के नागरिकों विशेषकर आदिवासियों के बौद्धिक सम्पदा अधिकार का सद्भावना से संरक्षण किया जाना चाहिए। पौधो तथा वन्य प्राणियों की प्रजाति का संरक्षण कर राज्य को समृद्धशाली , अनुवांशिक विविधिता के एक अभिन्न अंग के रूप में विकसित व संरक्षित किया जाना चाहिए।
- राष्ट्रीय उद्यानों , अभ्यारण्यों, वन क्षेत्राों तथा अन्य संरक्षित क्षेत्राों के मध्य ऐसे महत्वपूर्ण गलियारों की पहचान एवं घोषणा किया जाना चाहिए जो पौधों एवं वन्य प्राणियों के आनुवांशिक निरंतरता बनाये रखने के लिये आवश्यक है। ऐसे क्षेत्राों का प्रबंधन वन प्राणियों की आवश्यकताओं जैसे स्नैग, प्राकृतिक रिक्त स्थल, घास,

क्षेत्रा , विशिष्ट शैल आवासों, गुफाओं, कन्दराओं एवं जल स्त्रोतों के संरक्षण द्वारा किया जाना चाहिये।

- विलुप्तता के कगार पर खडे पौधो तथा वन्य प्राणियों के बाह्य स्थली संरक्षण हेतु आधुनिक तकनीकों जैसे टिशु कल्चर एवं जैव तकनीकी से संरक्षित किया जाना चाहिए।
- एकल प्रजाति रोपण तथा विदेशी प्रजातियों के रोपण यथा संभव न किया जायें जब तक कि उनकी स्थल पर उपयोगिता वैज्ञानिक अनुसंधान के आधारों एवं प्रयोगो से स्थापित न कर दी गई हो। राज्य के वनों में विदेशी वन्य प्राणियों की प्रजातियों को प्रवेश नहीं दिया जाना चाहिए।
- राज्य के आदिवासी तथा अन्य मूल निवासी जो वनों तथा वनो के समीप रह रहे हैं उनके समृद्ध सांस्कृतिक विरासत व रीति रिवाजो को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ताकि वे अपने विशिष्ट परस्परव्यापी संबंधो द्वारा स्वयं एवं वनों को लाभ पहुंचा सकें। संरक्षित क्षेत्रों में विद्यमान भौगोलिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्यों का प्रबंधन जैव सांस्कृतिक संरक्षण के परिपेक्ष्य में किया जाना चाहिए।

4.9.2 राज्य के समृद्ध जैव विविधता संरक्षण हेतु आवश्यक पहलुओं का वन प्रबंधन में विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए तथा वन प्रबंधन योजनाओं में इसके लिये आवश्यक प्रावधान रखा जाना चाहिए। राज्य के प्रत्येक संरक्षित क्षेत्रा हेतु वन्य प्राणी प्रबंधन योजना तैयार किया जाना चाहिए। संरक्षित क्षेत्रों में पारिस्थितिकीय विकास एवं स्थानीय जन सहयोग के माध्यम से जैविक दवाब का प्रबंधन किया जाना चाहिए।

4.10 वनीकरण, सामाजिक वानिकी एवं कृषि वानिकी

4.10.1 राज्य के कम वन क्षेत्रा वाले जिलों में समयबद्ध , वनीकरण तथा वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाया जाना चाहिए जिसमें मुख्यतः काष्ठ, चारे की आपूर्ति पर विशेष ध्यान दिया जाकर स्थानीय लोगों ,प्रमुखतः वनो पर आधारित लोगों, विशेष कर भूमिहीन तथा गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की बढ़ती मांग की पूर्ति हो सके ।

4.10.2 राजमार्गो, रेल्वे लाईनों, नदी–नालों, नहरों के किनारे और शासकीय व्यवसायिक, संस्थागत एवं निजी अतिशेष भूमियों पर वृक्षारोपण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। शहरी/औद्योगिक,उत्खनित क्षेत्रों में हरित पटिट्यॉ स्थापित किया जाना चाहिये। ऐसे कार्यक्रम क्षेत्रा के सूक्ष्म जलवायु को संवर्द्धित भी करते हैं।

4.10.3 ऐसी ग्रामीण सामुदायिक भूमि जो कृषि के लिये अनुपयोगी है उसमें वृक्षारोपण व चारागाह विकास कार्यक्रम लिया जाना चाहिए। ऐसे कार्यक्रमों को प्रांरभ करने के लिये तकनीकी तथा वित्तीय सहायता हेतु राज्य शासन/ सरकारी उपक्रमों / कृषि विश्वविद्यालयों से सहयोग लिया जाना चाहिये। इससे प्राप्त राजस्व को पंचायत का राजस्व माना जाना चाहिये। अन्य प्रकरणों में ऐसे राजस्व के बड़े अंश को स्थानीय समुदायों में उन्हें एक लाभांश के रूप में वितरित किया जाना चाहिये। व्यक्तिगत लाभों विशेष कर कमजोर वर्ग , भूमिहीन मजदूर, लघु व सीमांत कृषक, अनुसूचित जाति जन जाति, महिला एवं गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले लोगों को लगाये गये वृक्षों पर स्वामित्व का अधिकार समुचित प्रावधानों एवं नियमों को निर्धारित करते हुए दिया जाना चाहिये। हितग्राही यदि इस बात की जिम्मेदारी लेते हैं कि वे वृक्षों की सुरक्षा करेगें तो स्वयं रोपित वृक्षों मे से अपनी आवश्यकतानुसार वनोपज का उपयोग करने के लिये पात्रा होगें।

4.10.4 राज्य की भू–राजस्व संहिता तथा वन में भी समुचित संशोधन किया जाना चाहिये ताकिं वृक्षों के विदोहन, अनुज्ञापत्रा, तथा वाणिज्यिक नियमों को

आवश्यकतानुसार सरल बनाया जा सके और व्यक्तियों तथा संस्थानों को निजी वृक्ष खेती एवं वृक्षारोपण हेतु प्रोत्साहित किया जा सके।

4.10.5 शासकीय वनों में वृक्षारोपण करने हेतु कार्य आयोजना / प्रबंध योजना के प्रावधानों का कड़ाई से पालन किया जाना चाहिये। राज्य में बढ़ते हुये काष्ठ की मांग तथा आपूर्ति के लिये सिंचित तथा उच्च तकनीक वृक्षारोपण को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये । इस दिशा में वन विकास निगम को प्रमुख भूमिका निभाना चाहिये।

4.11 जैविक पदार्थ का उत्पादन

राज्य की अधिकांश जनता को जलाऊ, काष्ठ , बांस , चारा तथा रेशों की आवश्यकता सर्वप्रथम हैं। इस संदर्भ में ग्रामीण जनता के सतत् स्थाई संसाधन उपयोग संबंधी आवश्यकताओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

4.11.1 कार्य आयोजना/ प्रबंधन योजना के प्रावधान जैव पदार्थो जैसे काष्ठ के उत्पादन को प्रोत्साहित करना चाहिये। काष्ठ के सुसंगत उपयोगों हेतु आवश्यक कार्यवाही किया जाना चाहिये ताकि इस संसाधन का अधिकाधिक उपयोग हो सके एवं उससे आर्थिक लाभ भी प्राप्त हो सके।

4.11.2 घरेलू उर्जा में वैकल्पिक साधनों के प्रोत्साहन हेतु प्राथमिकता के आधार पर कार्यवाही किया जाना चाहिये ताकि वनों पर जलाऊ लकड़ी प्रदाय हेतु दबाव कम हो सके।

4.12 वनों पर आधारित उद्योग

राष्ट्रीय नीति 1988 के तारतम्य में वनों पर आधारित उद्योगों को इस बात के लिये प्रोत्साहित करना है कि वे अपने उपयोग के लिये कच्चे माल की आपूर्ति निजी वानिकी के माध्यम से करे तथा वैकल्पिक कच्चे माल का प्रयोग करें ।

4.12.1 क्षेत्रा के पारिस्थितिकीय, सांस्कृतिक, और सामाजिक प्रभावों का भली भांति अध्ययन किये बिना कुटीर एवं ग्रामीण स्तर के उद्योगों को छोड़कर भविष्य में किसी भी वन आधारित उद्योगों को अनुमति नहीं दिया जाना चाहिये। स्थानीय जनता के ईधन चारे और इमारती लकड़ी की आवश्यकताओं को वनाधारित उद्योगो के लिए उत्सर्ग नहीं किया जाना चाहिये।

4.12.2 वन आधरित उद्योगों तथा कृषकों के बीच सीधे संबंधों को प्रोत्साहन देना चाहिये ताकि कृषक उद्योगों में लगने वाले कच्चे माल का उत्पादन कर सकें । उद्योग – कृषक के बीच आपसी तालमेल का परिणाम प्रमुख कृषि भूमियों के प्रति स्थापन तथा छोटे तथा सीमान्त कृषकों के विस्थापन के रूप में नहीं होना चाहिये ।

4.12.3 उद्योगों को राज्य के जैविक पदार्थीय संसाधनों के व्यापार में किसी प्रकार का अनुदान नहीं देना चाहिये ताकि वे यथा संभव विकल्प के रूप में गैर वानिकी कच्चे माल के उपयोग हेतु प्रेरित हो सकें ।

4.12.4 उद्योगों के लिये भूमि का आंवटन भूमि परिसीमन और राज्य के अन्य भू – नियमों के अन्तर्गत किया जाना चाहिये । इन उद्योगों को किसी प्रकारसे राज्य में रह रहे आदिवासियों और अन्य समुदायों को सामाजिक , सांस्कृतिक परम्पराओं पर विपरीत प्रभाव डालने की छूट नहीं देना चाहिये ।

4.12.5 ऐसी उपयुक्त औद्योगिक तथा तकनीकी प्रणाली विकसित किया जाना चाहिये जो ग्रामीण शिल्पकारों / कारीगरों को जैव पदार्थो पर आधारित कुटीर उद्योगों को चलाने योग्य बना सके ।

4.13 आदिवासी जन समुदाय तथा वन

ऐसी समस्त ऐजेसियॉ जो वनों के प्रबंधन के लिये जिम्मेदार हैं, जिनमें वन विभाग , वन विकास निगम और लघुवनोपज संघ भी शामिल हैं, आदिवासियों को वनों में पुनरूत्पादन और विकास के लिये सहभागी बनाना चाहिये। इसे वनवासियों तथा वनों के महत्व परस्पर सहजीवी संबंधों को प्रगाढ़ बनाने के दृष्टि से क्रियान्वित किया जाना चाहिये।

4.13.1 लघु वनोपजों का स्थानीय लोगों विशेषकर आदिवासियों के सहयोजन के साथ संरक्षण, पुनरोत्पादन तथा बिना किसी क्षति के उनकी फसल लेना तथा ऐसी वनोपजों के लिये विपणन की व्यवस्था करना ।

4.13.2 वन ग्रामों को राजस्व ग्रामों में परिणित करना ।

4.13.3 आदिवासी हितग्राहियों के आर्थिक स्तर के सुधार के लिये सामुदायिक आधार पर योजनायें चलाना ।

4.13.4 एकीकृत क्षेत्रा विकास कार्यक्रमों को मात्रा इसलिये नहीं लेना कि वनांचलों तथा उसके आस पास रहने वाले आदिवासियों की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके , अपितु उनसे विद्यमान वनों पर से दबाब भी कम हो सके ।

4.14 वन विस्तार

स्वेच्छा से ग्रामीणों द्वारा प्रदाय समर्थन और सहयोग के बिना वन संरक्षण का कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता । अतः यह आवश्यक है कि ग्रामवासियों के मन में वन, उनके विकास और संरक्षण के प्रति प्रत्यक्ष रूप से रूचि उत्पन्न की जावे तथा सामान्य रूप से उनमें वृक्षों , वन्य जीवों तथा प्रकृति के महत्व के प्रति चेतना जगाई जावे । यह लक्ष्य प्राथमिक स्तर से लेकर शैक्षणिक संस्थाओं के सहयोग से हासिल किया जा सकता हैं । किसानों और इच्छुक लोगों को अपनी भूमि और जल संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करने के लिये कृषि, वन वैज्ञानिक और वन वैज्ञानिक तकनीकी सीखने हेतु कृषि संस्थाओ के माध्यम से अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु विश्वविद्यालयों एवं शासकीय विभागों के पास उपलब्ध जन संचार माध्यम, श्रव्य व दृश्य उपकरणों और विस्तार मशीनरी की सहायता से तैयार अच्छे कार्यक्रमों को प्रचारित करना आवश्यक है ।

4.14.1 प्रकृति पर्यटन को प्रोत्साहन

प्रकृति, पर्यटन या पारिस्थिकीय पर्यटन जो वनों के रमणीक स्थलों तथा संरक्षित क्षेत्राों में वन्य प्राणियों के दर्शन संबंधी अवसर प्रदाय करता है, को वानिकी विस्तार का एक अंग मानना चाहिये। पारिस्थिकीय पर्यटन की इन गतिविधियों को ग्रामीण समुदायों के आर्थिक विकास प्रणाली के रूप में भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

4.15 वानिकी शिक्षा

वानिकी को एक वैज्ञानिक विधा एवं व्यवसाय के रूप में मान्यता दी जानी चाहिये। राज्य के मानव संसाधन आवश्यकताओं को देखते हुए वानिकी शिक्षा हेतु समर्पित विश्वविद्यालयों एवं अन्य संस्थानों में स्नाकोत्तर अनुसंधान, शिक्षा एवं उत्कृष्ट व्यवसायिक कौशल के सृजन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। राज्य वन सेवा में चयन के दौरान अधिकारियों के शैक्षणिक एवं व्यवसायिक योग्यता को दृष्टिगत किया जाना चाहिये।

4.16 वानिकी अनुसंधान

पर्यावरण स्थायित्व, उर्जा के स्त्राोत, ग्रामीण क्षेत्राों में रोजगार के अवसर प्रदान करने हेतु वनों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है। वानिकी अनुसंधान पर विशिष्ट ध्यान दिया जाना चाहिये जिससे अनुसंधान के आधार को सुदृढ़ कर नवीन प्राथमिकताओं का चयन किया जा सके। राज्य को चाहिये वह पारदर्शिता एवं प्रतियोगी भावना के आधार पर अनुसंधान संस्थानों जैसे भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद व्दारा किये जा रहे अनुसंधान कार्यो को आर्थिक सहयोग से प्रोत्साहित कर एवं उनमें समन्वय स्थापित करे। राज्य में अनुसंधान एवं विकास हेतु आवश्यक प्राथमिकता वाले कुछ क्षेत्रा इस प्रकार हैं :—

- एकीकृत पारिस्थितिकीय प्रणाली को दृष्टिगत रखते हुए बहुस्तरीय नवीन वन वर्धनिक प्रणालियों का विकास ।
- आधुनिक वैज्ञानिक, वन वर्धनिक और तकनीकी विधियों का उपयोग करते हुए गैर काष्ठीय वनोत्पादनों के उत्पादन में प्रति इकाई क्षेत्रा, प्रति इकाई समय में वृद्धि करना ।
- पड़त/सीमान्त/अनुयोगी / खदानी क्षेत्राों तथा जल ग्रहण क्षेत्राों को वनस्पतियों से पुर्नच्छादित करना।
- विद्यमान प्राकृतिक वन संसाधनों का प्रभावकारी संरक्षण एवं प्रबंधन ।

- सामाजिक वानिकी , कृषि वानिकी एवं प्रक्षेत्रा वानिकी।
- विभाग एवं निजी व्यक्तियों व्दारा सभी जिलों में आधुनिक रोपणियों की स्थापना।
- संयुक्त वन प्रबंधन एवं वनवर्धनय वन संसाधनों का समुचित उपयोगय महिलाओं तथा आदिवासियों का सशक्तिकरणय गरीबी उन्मूलन मे वानिकी की भूमिकाय सामाजिक ओर जीविकोपार्जन का विश्लेषण, वन नीति, औषधीय पौघो की खेती एवं विपणन, विलुप्तता के कगार पर खड़े तथा विलुप्तता के भय से ग्रस्त वनस्पतियों एवं वन्य प्राणियों का संरक्षणय वन परिदृश्यावली आधारित वन प्रबंधनय वनो के जैव सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण इत्यादि ।

4.17 मानव संसाधन प्रबंधन एवं क्षमता निर्माण

वन अधिकारियों के प्रतिष्ठा एवं व्यवसायिक क्षमता के विकास हेतु शासन को संकल्पित होना चाहिये। जिससे उच्च शिक्षित तथा उत्साहित कर्म आकर्षित हो सके तथा सुदूर एवं विपरीत परिस्थितियों में कार्य करने वाले व्यक्तियों के सेवा प्रकृति में अनुकूल वातावरण तैयार हो सके।

4.17.1 शासन को चाहिये कि वन विभाग में सभी स्तरों पर सतत रूप से अच्छे प्रशिक्षित व दक्ष कर्मचारियों / अधिकारियों की उपलब्धता को सुनिश्चित करे ।

4.17.2 वन कर्मचारियो / अधिकारियो के लिये विशेषज्ञता तथा दक्षता हेतु प्रशिक्षण की भी व्यवस्था होना चाहिये ताकि वे अपनी व्यक्तिगत योग्यता एवं दक्षता को बनाये रखें जिससे वे राज्य में वनों के विकास हेतु नई तकनीको, नये सिद्धान्तों तथा आधुनिक अवधारणाओं से स्वयं को अवगत करा सकें। मानव संसाधन विकास की रणनीति में स्थानीय लोगों विशेषकर ग्राम वनसमितियों, वन सुरक्षा समितियों तथा इको विकास समितियों की क्षमता विकास को सुनिश्चित किया जाना चाहिये।

4.17.3 राज्य में पहले से ही कार्यरत प्रशिक्षण संस्थाओं को और विकसित एवं सुदृढ़ करना चाहिये। इन संस्थाओं को अधिकारियों / कर्मचारियों को सेवा सह प्रशिक्षण तथा संयुक्त वन प्रबंधन कार्यों मे संलग्न स्थानीय व्यक्तियों के क्षमता वृद्धि हेतु उपयोग में लाना चाहिये।

4.18 वानिकी में सूचना प्राद्योगिकी का उपयोग

4.18.1 व्यापक वानिकी डाटा बेस का विकास

राज्य में वानिकी के व्यापक डाटा बेस के विकास तथा उसमें निरंतर परिमार्जन की महत्ता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके लिये आवश्यक मानव संसाधन एवं कम्प्यूटर उपकरणो से सुसज्जित **आधुनिक वानिकी सूचना केन्द्र** का गठन किया जाना चाहिये।

4.18.2 भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी. आई.एस.) तथा भूमंडलीय स्थिति प्रणाली (जी. पी. एस.) का वानिकी प्रबंध में प्रयोग

वानिकी में भौगोलिक सूचना प्रणाली (जी. आई.एस.) तथा भूमंडलीय स्थिति प्रणाली (जी. पी. एस.) का बहुत महत्वपूर्ण उपयोग है। आधुनिक तकनीकों को वानिकी योजनाओं के निर्माण क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन में उपयोगी बनाने हेतु एक पूर्णतः विकसित **जी. आई. एस. केन्द्र** स्थापित किया जाना चाहिये।

4.18.3 वानिकी में इलेक्ट्रानिकी – प्रशासन को प्रोत्साहन।

इलेक्ट्रानिक प्रशासन, जो सूचना तकनीकी का प्रशासकीय कार्यो में उपयोग है आज जीवन के हर क्षेत्रा में अपना विशिष्ट बना चुका है। इलेक्ट्रानिक प्रशासन एवं सूचना प्रोद्योगिकी का विशेष महत्व है। वन प्रशासन में विशेषकर जन साधारण से संबंधित मामलों में इलेक्ट्रानिक तकनीकी के अधिकाधिक उपयोग को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये।

4.19 विधिक सहायता एवं अधोसंरचना का विकास

इस नीति के प्रभावकारी क्रियान्वयन हेतु समुचित विधयिका एवं अधोसंरचना संबंधी सहयोग की आवश्यकता है।

4.20 वानिकी के लिये वित्तीय सहायता

राज्य वन नीति के उद्देश्यो को आर्थिक संसाधनों में बिना समुचित पूंजी निवेश के प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह राज्य का महती दायित्व है कि वह अपने आर्थिक संसाधनो को वन नीति एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु उपलब्ध कराये।

4.21 उपसंहार

यह विश्वास है कि अलोच्च वन नीति छत्तीगसढ़ राज्य में पर्यावरणीय स्थिरता, जैव–सांस्कृतिक विविधता संरक्षण को प्रोत्साहित कर वनों में रहने वाले आदिवासी एवं वनों पर आधारित अन्य समुदायो की मूलभूत आवश्यकताओ को पूर्ण करने वाले वन प्रबंधन कार्यक्रमों का सृजन करेगी।

छत्तीसगढ़ के राज्यपाल के नाम से
तथा आदेशानुसार

(राम प्रकाश)
विशेष सचिव
वन एवं संस्कृति विभाग